P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* (Part-1) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

मानव जीवन के विकास में विश्वविद्यालयी कला शिक्षा की आवश्यकता

सुनीता यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर,
चित्रकला विभाग,
आगरा कॉलेज,
आगरा

सारांश

बस्तुबोध से लेकर उद्देश्यपूर्ण क्रियाशीलता तक अर्थात् ज्ञान से लेकर सृजन तक मानवीय क्षमताओं को विकसित करना ही शिक्षा का लक्ष्य है कला से मनुष्य के जीवन में सौन्दर्य की सुन्दर सुगन्ध भर जाती है तथा एक आन्तरिक तृप्ति अनुभव होती है; साथ ही यह आत्म–साक्षात्कार में भी सहायक होती है। कला विहीन मनुष्य का जीवन अधूरा तथा पशु के समान है जो केवल भौतिक सुख–साधन में ही लगा रहता है। कलाओं का सम्बन्ध सीधे तौर पर हमारी ज्ञानेन्द्रियों से होता है। संगीत की ध्वनियॉ श्रवणेन्द्रिय का संस्कार और विकास करती है, काव्य की भाषा हमारी वाक् शक्ति को स्पष्टता और सामर्थ्य प्रदान करती है; नृत्य हमारी मांस पेशियों की कार्य क्षमता को सूक्ष्मतम स्तरों तक नियन्त्रित करता है; चित्रकला से आकृतियों की विभिन्न विशेषताओं जैसे आकार, वक्रता, निकटता, दूरी एवं रंगों के बलों के अनेक प्रकार के भेदों को पृथक् पृथक् अनुभव करने की योग्यता आती है; तथा मूर्तिकला से स्पर्शेन्दिय अर्थात् त्वचा के कोमल, कठोर, खुरदरे, चिकने, फिसलने वाले तथा चुभने वाले विभिन्न प्रभावों का अनुभव होता है। जीवन में विभिन्न प्रकार के कार्यों के सम्पादन में ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त उक्त सम्वेदनों का महत्वपूर्ण ही नही अपितु अनिवार्य प्रयोग होता है। इस प्रकार सम्पूर्ण शरीर की विभिन्न क्रियाओं के हेतु जिस योग्यता की आवश्यकता होती है उसका अवसर एवं परिस्थिति के अनुकूल कितनी मात्रा में प्रयोग किया जाना चाहिये–इसकी योग्यता कलाओं की शिक्षा के द्वारा प्रदान करना सर्वाधिक उपयोगी है। जिसमें विश्वविद्यालयी कला–शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है।

देश ही नही विदेशों में भी कला–इतिहास के अध्ययन तथा अध्यापन का कार्य हेतु कोर्टलैण्ड इन्स्टीट्यूट ऑफ द यूनिवर्सिटी ऑफ लन्दन, द डिपोर्टमेन्ट ऑफ क्लासिकल आर्ट एण्ड आर्केयोलोजी यूनिवर्सिटी कालेज लन्दन; तथा वारबर्ग इन्स्टीट्यूट लन्दन में विशेष रूप से होता है।

मुख्य शब्द : आत्म साक्षात्कार, वस्तुबोध, सम्वेदनों, ज्ञानेन्द्रियों, कला–शिक्षा।

प्रस्तावना

जीवन में संस्कृति का और संस्कृति में कला का बहुत महत्व हैं। इन दोनों का आरम्भ तथा विकास भी साथ–साथ हुआ है तथा दोनो ही एक–दूसरे के पूरक है। एक दम आदिम परिस्थितियों में जीवन यापन करने वाले मानव–समूहों से लेकर विकसित संस्कृतियों के अधुनातन परिवेश तक कला प्रत्येक विश्वासों और भावनाओं से अन्तरंग एवं बहिरंग दोनों ही रूपों में धुली–मिली है। संस्कृति कला की क्रोड़ बनती है और कला में संस्कृति का रूप–विन्यास निखरता है। कला के रूप जीवन को संस्कारित करने के साथ–साथ संस्कृति की धाती बनते चले जाते है।

कला का भाव मन में सहज रूप से उत्पन्न होता है और सहज क्रिया–व्यापार में ही कला के प्राथमिक रूप विधान ग्रहण करते है। इस प्रकार के विधान में कही भी औपचारिक्ता के दर्शन नहीं होते। पर जैसे–जैसे कला के रूप स्थिर होते जाते है, उनका रूप –विधान भी विधियों और नियमों का आधार ग्रहण करता जाता है। कला अनौपचारिक्ता से औपचारिक्ता की ओर तथा लोक से शास्त्र की ओर बढती चली जाती है।

एक समय था जब यह विधान मौखिक था, फिर इसका शास्त्रीय स्वरूप ग्रन्थों में वर्णित होने लगा; परन्तु प्रधानता आचार्यो के द्वारा शिष्यों को दिये गये मौखिक एवं क्रियात्मक निर्देशन की ही रही। निर्देशन में दर्शन का भी समावेश होने पर कला केवल कला नहीं रही; विधा के क्षेत्र में भी उसका पदार्पण हो गया। आश्रमों और गुरूकुलो से हट कर कला को कलाकारों के संघो,

चित्रशालाओं तथा विटवेशों में स्थान मिला। समाज पर जैसे –जैसे राज–सत्ता की पकड़ बढ़ती गयी, कला साधना और सृजन का रूप प्रभावित होता गया।

परन्तु इस कला–शिक्षा में कहीं न कहीं कुछ कमियॉ रह गयी हैं। कला के विद्यालय और विश्व–विद्यालयों अनुदान आयोग आदि ने इस पर कुछ अप्रिय टिप्पणियॉ भी की है, अतः यह आवश्यक हो गया है कि कला शिक्षण की पद्धति पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय। इसी परिपेक्ष्य में विश्वविद्यालयों के कला विभाग द्वारा गत शताब्दी में कला की उच्च–शिक्षा का जो स्वरूप रहा है, उससे कला का स्तर कितना विकसित हुआ है, कला के क्षेत्र को इनका क्या योगदान रहा है। इसी विचार को आधार बना कर प्रस्तुत शोध–कार्य का ताना बाना बुना गया है।

परिकल्पना

मैने जितने भी सेमीनार में भागीदारी की तो इस पर जरूर ही चर्चा रही कि किस प्रकार उच्च कला शिक्षा–व्यक्ति के मानसिक और शारीरिक विकास में सहायक है एवं बिना शिक्षा के व्यक्ति का जीवन का कोई तात्पर्य नही है। मानव व सभ्यताओ के विकास के साथ ही साथ शिक्षा का भी विकास होता गया। कला–शिक्षा की तकनीक बदल गयी तो मैने भी सोचा क्यो न मैं इसी विषय पर लिखु कला–शिक्षा से जुडी हूँ तो विद्धानों से मिलना–जुलना होता रहता है। एवं इस विषय पर चर्चा होती रहती है डा0 जी0 के0 अग्रवाल जी से सम्पर्क में रहने का सौभाग्य मुझे 6–7 वर्ष का रहा मैं उनसे बहुत प्रभावित रही जब भी उनके पास बढती थी तो वह विद्धानों की गाथा सुनाते रहते थे एवं कला–शिक्षा पर बहुत जोर देते थे क्योकि वह आगरा कॉलेज से भी जुडे थे अतः मेरी रूचि भी इस विषय पर रही कि किस तरह से कला–शिक्षा को बढावा दिया जा सके। क्योकि मानव जीवन के लिए कला–शिक्षा बहुत ही उपयोग है।

साहित्यावलोकन

कला विदों द्वारा समय–समय पर विश्वविद्यालयी कला–शिक्षा के स्तर–सुधार और पाठ्यक्रम उन्नयन तथा उद्यतन शिक्षण पद्धतियों के समावेश की आवश्यकता को ध्यान में रखकर विचार तथा लेख प्रकाशित किये जाते रहे हैं। University Grants Commission, New Delhi द्वारा Sponsored National Conference on "Human Rights & Education March 22 & 23 2013 को आगरा कॉलेज आगरा में हुई जिसमें डॉ0 चन्द्रशेखर शर्मा का लेख संस्कृ ति और शिक्षक प्रकाशित हुआ अतीत का सब कुछ अच्छा नहीं है, और सब कुछ नया बुरा नहीं है। वर्तमान सांस्कृ तिक संकट से देश तथा समाज को बाहर निकालने का सर्वाधिक उत्तरदायित्व शिक्षकों का है। UGC Sponsored National Seminar POFECA-16 on Pertinence of Folk Elements in Contemporary Art Feb. 28.29-2016 में संजय कुमार जी का आधुनिक कला में लोक कला का बढ़ता बाजार प्रकाशित हुआ तथा डॉ0 सीमा मेहरा द्वारा समकालीन लोकला की प्रवृत्तियाँ एवं भविष्य पर चर्चा की गई एवं डिम्पल गुप्ता द्वारा बाजारीकरण एवं पूंजी निवेश में लोक तत्वों के विभिन्न नवीन स्वरूपों की उपयोगिता पर चर्चा की एवं प्रकाशित किया।

अतः लगातार कला की शिक्षा एवं कला के उन्नयन का प्रयास किया जा रहा है। समय–समय पर विद्वानों द्वारा एकत्रित होकर इस विषय पर चर्चायें भी की जाती रहती हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध –योजना की रूप– रेखा बनाने के पीछे विगत वर्षो में विश्वविद्यालयी कला–शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर चल रही चर्चाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है चित्रकला की उन्नति के लिए जो भी प्रयास कर सकती हूँ, प्रयासरत हूँ कि भारत विश्व का सबसे बडा स्टेचू लगाने तक ही न रहे विश्व के कला जगत में कला–शिक्षा में भी अगृणी रहे। जिसके लिए हमें अपनी विश्वविद्यालयी कला–शिक्षा में समय–समय पर विचार करने एवं बदलते हुए परिवेश के अनुसार सुधार की भी आवश्यकता है। कला की अच्छी शिक्षा के तीन लक्ष्य होने चाहिये–1 छात्र को कला के व्याकरण की शिक्षा देना। 2 छात्र को ऐसी चित्रण–विधि सिखाना जिससे उसकी मनोवैज्ञानिक सन्तुष्टि हो। 3 देश तथा समाज के इतिहास एवं परम्पराओं के अनुकूल वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप उपयोगी कला–रूपों को आगे बढ़ाना।

कार्यप्रणाली

अनुसंधान अभिकल्प

अपने पूर्वालोकन के आधार पर अपने शोध–विषय की रूप रेखा तैयार की। कला किसी भी प्रकार की शिक्षा में सहायक सिद्ध होगी। किसी वस्तु के रूपो को पहचानने में कला सहयोगी होती है।

साधन प्राथमिक और द्वितीय

1. प्राथमिक साधन– विश्व विद्यालय कला–शिक्षा के सम्बन्धित शोध संस्थान आदि।
2. द्वितीय साधन–लेख, पुस्तकें, प्रकाशित शोध–पत्रिकायें, समाचार पत्र, बेव साइट।
3. प्रदत्त– विभिन्न कलाकारों एवं विद्वोनों से साक्षात्कार द्वारा जो निष्कर्ष लगा एवं प्रदत्त विचारो का संकलन है।

अध्ययन सीमा

मेरे शोध का विषय उच्च कला–शिक्षा से सम्बन्धित है जिसको वि0वि0 में दी जाने वाली कला–शिक्षा की मानव जीवन के विकास आवश्यकता के विभिन्न पहलूओं एवं शिक्षा और कला सम्बन्ध और किस प्रकार वह मानव जीवन में उचित व्यक्तित्व के विकास में सहायक है विश्वविद्यालयी कला–शिक्षा का आरम्भ और विकास एवं जो वर्तमान स्थिति है उसी पर प्रकाश डालने की कौशिश की गयी है।

शिक्षा और कला का सम्बन्ध

शिक्षा और कला का सम्बन्ध बहुत महत्वपूर्ण है। शिक्षा के प्रायः दो उद्देश्य माने गये है। एक यह कि मनुष्य जिन क्षमताओं और विशेषताओं को लेकर जन्म लेता है उनका विकास करना ही शिक्षा का लक्ष्य है, दूसरा यह कि शिक्षा मनुष्य की कमियों तथा दुर्बलताओं को दूर करके उसे सामाजिक आदेर्शों के अनुरूप ढ़ालती है अर्थात यह उसमें उन विशेषताओं को उत्पन्न करती है जो उसमें नहीं है। ये दोनों ही मत एकांगी है प्रथम मतानुसार मनुष्य में कुछ ऐसी विशेषताऐं भी विकसित हो

सकती हैं। जिन्हें हम समाज की दृष्टि से अनुचित अनैतिक अथवा अनाचार पूर्ण कह सकते हैं। दूसरे मत के अनुसार यदि मनुष्य की स्वाभविक क्षमताओं का दमन करने का प्रयत्न किया जाए तो वह विदोही भी बन सकता है। अतः दोनो मतों के समन्वयसे यह स्थापना की जा सकती है कि सामाजिक आदान–प्रदान के परिपेक्ष्य में मनुष्य की व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास करना ही शिक्षा का उद्देश्य है। सामाजिक परिपेक्ष्य में ही व्यक्ति की मौलिकता का महत्व होता है। समाज से निरपेक्ष होकर उसका कोई महत्व अथवा उपयोग नही है। व्यक्ति की मौलिक्ता का विकास किसी दबाव में नही होनो चाहिये। इसकें हेतु एक स्वतन्त्र वातावरण की आवश्यकता है।

विकास के साथ–साथ व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक संस्कार भी होता चलता है। सौन्दर्य बोध इसका एक महत्वपूर्ण पक्ष है जिसमें कविता, संगीत, चित्रकला तथा अभिनय आदि भी समाहित हैं। ये सभी विज्ञान की अपेक्षा मनुष्य से सीधे रूप में सम्बन्धित है। मानवीय अनुभूति तथा अभिव्यंजना की उपर्युक्त पद्धतियॉ मानसिक शिक्षा (Mental Education) के अन्तर्गत आती हैं। ये केवल बोध तक ही सीमित न रहकर सम्वेदनशीलता के साथ गहराई से सम्बन्धित हैं।

शिक्षा का एक लक्ष्य भावात्मक विकास भी है उचित भावात्मक विकास की दृष्टि से शिक्षा में कला का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। इससे हमारी मान्यताओं और जीवन मूल्यों का भी सम्बन्ध है। जीवन के मूल्यों को स्थित रखने और उनसे प्रेरित तथा प्रभावित करने में कलाओं का बहुत सहयोग रहता है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य में ऐसे संस्कार जन्म लेते है जिनसे मनुष्य का व्यक्तित्व खण्डित होने से बचता है तथा समाज एवं व्यक्ति का संगतिपूर्ण सम्बन्ध विकसित होता है।

मानव–समाज में परस्पर सहानुभूति एवम् सहयोग की आवष्यक्ता है। हमारी गहनतम भावनाओं से हमारा आपसी व्यवहार बहुत प्रभावित करता है अतः शिक्षक को शिक्षा देते समय इसका ध्यान रखना आवश्यक है वह अपने शिष्यों के भावनात्मक स्वभाव को अनदेखा नही कर सकता। इस दृष्टि से लगभग प्रत्येक विषय की शिक्षा में कला सहायक हो सकती ह ै। व्यक्ति से कला का सम्बन्ध व्यक्ति के स्वयं के तथा समाज के परिपेक्ष्प में विकास पर आधारित है। अतः इसके इन सभी पक्षों के विषय में विचार करना आवष्यक है

विश्वविधालयी कला–शिक्षा का आरम्भ और विकास

भारत में अंग्रेजी शासन के समय पष्चिमी पद्धति के कला–विधालयों का आरम्भ हुआ। इनसे कुछ हट कर बंगाल में गुरू–शिष्य परम्परा के आधार पर कला–शिक्षा की व्यवस्था की गयी। देश के स्वतन्त्र होने पर स्कूलों तथा कॉलेजो में अन्य विषयों की प्रचलित शिक्षा–पद्धति पर कला को भी उच्च शिक्षा का एक विषय बनाने का प्रयत्न हुआ। कलकत्ता, बम्बई, बडोदा की शिक्षा पद्धतियों के भिन्न महाविद्यालयी तथा विश्वविद्यालयी पद्धति पर आगरा विश्वविद्यालय में भी कला की शिक्षा आरम्भ हुई। पहले स्नातक स्तर पर और उसके बाद 1960 से परास्नातक स्तर पर। बीसवीं शताब्दी के अन्त तक अनेक विश्वविद्यालयों में इससे मिलती–जुलती पद्धति पर कला की शिक्षा की व्यवस्था की गयी।

मुम्बई में सर जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट भी देश की विख्यात कला–शिक्षण संस्था है। 1950 ई0 में बडौदा में महाराजा सयाजी राव विश्वविधालय (एम0एस0यूनिवर्सिटी) में ललित कला संकाय की स्थापना तथा इसमें रीडर तथा चित्रकला विभाग के अध्यक्ष पद पर एन0एस बेन्द्रे की नियुक्ति हुई। भारत के किसी भी विश्वविधालय में विश्वविद्यालयी स्तर पर कला विषय मे प्रशिक्षण देने का यह प्रथम प्रयास था। इस संस्था ने अनेक विद्वानों तथा कलाचार्यों का ध्यान आकर्षित किया। इसके प्रमुख कारण यहॉ की शिक्षण–पद्धति एवं वातावरण है। इससे पूर्व कला–शिक्षण की केवल दो पद्धतियॉ प्रचलित थी – यूरोपीय अकादमिक अथवा तथाकथित परम्परागत। दोनों ही बहुत संकुचित थी और छात्रों की सृजनात्मक प्रतिभा के विकास के अवसर भी बहुत कम थे।

दिल्ली पोलीटैक्निक में भी इसके माध्यमों एवं प्रविधियों के व्यावसायिक स्तर के प्रशिक्षण तथा कला–इतिहास के सैद्धान्तिक ज्ञान के पाठय क्रम आरम्भ किये गये। ब्रिटिश शासन से पहले यह विषय हाईस्कूल कक्षाओं तक पढाया जाता था वर्ष 1931 से उत्तर प्रदेश में इसे इन्टर कक्षाओं में भी पढाया जाने लगा। वर्ष 1947 में आगरा वि0वि0 मे कला विषय में स्नातक कक्षाओं में एक विषय के रूप में स्वीकृत हुआ जिसे आगरा कॉलेज आगरा में आरम्भ किया गया; जहॉ प्रथम विभागाध्यक्ष के रूप मे श्री एम.के. वर्मा की नियुक्ति हुई।

उस समय आगरा वि0वि0 का क्षेत्र. उत्तर भारत में बहुत विस्तृत था जिसमे उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा मध्यप्रदेश भी आते थे। अतः स्नातक स्तर पर इनकी शिक्षा इन सभी प्रदेशों में आरम्भ हो गयी। इन सभी क्षेत्रों में परवर्ती काल में अनेक नये विश्वविधालय स्थापित हुए और आगरा वि0वि0 का क्षेत्र सीमित हो गया।

कुछ ही वर्ष पश्चात् चित्रकला विषय को परास्नातक स्तर पर आरम्भ करने के प्रयत्न किये जाने लगे।

श्री आर0एन0 टण्डन तथा डॉ0 चिरन्जी लाल क्षा तथा इलाहाबाद वि0वि0 के श्री क्षितीन्द्रनाथ मजूमदार के साम्मिलित प्रयास से 1960 में चित्रकला विषय की एस0ए0 कक्षाएँ धर्मसमाज महाविधालय अलीगढ़, मेरठ कॉलेज मेरठ तथा डी.ए.वी. कॉलेज देहरादून में आरम्भ हो गयी। आज यह विषय उत्तर भारत के अनेक विश्वविद्यालयो में परास्नातक स्तर पर मान्यता प्राप्त है।

इसके दो–तीन वर्ष उपरान्त ही जिन विश्वविद्यालयों तथा महाविधालयों में चित्रकला विषय की परास्नातक स्तर तक पढाई होती थी वहा शोध कार्य भी होने लगा।

कतिपय विश्वद्यिालयों में ललित कला संकाय बन गये हैं जहॉ चित्रकला एक विषय के रूप में है। अन्य विश्वविधालयों मैं यह कला–संकाय के अन्तर्गत मान्य है। विश्वविधालय अनुदान आयोग इसे ललित कला संकाय के विषयों में मानता है। अतः आवष्यक्ता इस बात की है कि जहॉ अब तक ललित कला संकाय नहीं हैं वहॉ इसकी

स्थापना कर चित्रकला विषय को उसी के अन्तर्गत रखा जाय। एवं शिक्षा और कला सम्बन्ध, और किस प्रकार वह मानव जीवन में उचित व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक है।

16वीं तथा 17वीं शती के अकादमी पाठ्यक्रम प्रायः प्राचीन, मानववादी एवं शास्त्रीय कला पर आधारित थे। इससे कला के केवल मूल आधारों का ही ज्ञान मिलता था। जर्मनी में इसकी प्रतिक्रिया हुई। छात्रों की स्वतन्त्र–कल्पना शक्ति को महत्व दिया जाने लगा। इसके प्रथम लक्षण म्यूनिख अकादमी में प्रकट हुए। इसका मुख्य ध्येय सामुहिक शिक्षा के स्थान पर विशुद्ध व्यक्तिवादी पद्धत्ति का प्रोत्साहित करना था।

स्वच्छन्दतावाद तथा प्रभाववाद के उदय के साथ ही शिक्षण की परम्परागत विधि के प्रति विरोद्ध आरम्भ हो गया और सभी बाहरी नियमों के बन्धन को अस्वीकार कर दिया गया। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से अकादमियों को समाप्त कर औधोगिक तथा प्रयोजन–मूलक शिल्पों और वास्तुकला के प्रशिक्षण विद्यालयों अथवा संस्थानों में बदल दिया गय।

आज यूरोप में प्राचीन अकादमियों के स्थान पर अनेक संग्रहलय कला की शिक्षा का कार्य कर रहें हैं। बडें बडें नगरो तथा राजधानियों में कला की शिक्षा के लिए अनेक स्कूल भी प्रसिद्धि प्राप्त कर रहें है। इनमें कला की विभिन्न विधाओं की अधतन तकनीकि जानकारी तथा प्रायोगिक कार्य सिखाने के अतिरिक्त छात्रों की व्यक्तिगत प्रतिभा एवं शैली के ही विकास का प्रयत्न किया जाता है। उदाहरणार्थ ग्रेट ब्रिटेन में कलाओं के प्रोत्साहन एवं उन्नयन हेतु प्राचीन रॉयल अकादमियों के स्थान पर ''द आर्ट्स काउन्सिल ऑफ ग्रेट ब्रिटेन '' की स्थापना की गई है। इसका कार्य शिक्षा मंत्रालय की देख–रेख में चलता है।

विश्वविद्यालय कला–शिक्षा की वर्तमान स्थिति

भारत वर्ष के महाविद्यालयों में कला शिक्षा के आरम्भिक युग में ही इसकी गुणवत्ता के प्रति शंकाए उत्पन्न होने लगी थीं। ऐसा मत प्रकट किया गया था कि कला शिक्षा की तत्कालीन पद्धति डिग्री तथा डिप्लोमा के रूप में केवल एक सीमित उद्देश्य की ही पूर्ति कर सकती है। अधिक से अधिक यह शौकिया कलाकरों का एक ऐसा बड़ा समुदाय बना सकती है जिसमें मूर्तिकला एवं चित्रकला के तकनीक की सामान्य जानकारी हो जिसे वे भविष्य में बढ़ा भी सकते है; तथा इनमें से अधिकांश प्राय या तो वाणिज्यपरक कला (Commercial Art) को अपनी आजीविका का साधान बना ले या फिर स्कूलों तथा कालेजों में कला–शिक्षक बन जायें। कला की शिक्षा में देशी अथवा विदेशी कला तकनीकों एवं परम्पराओं को महत्व देने के सम्बन्ध में भी पर्याप्त विवाद आरम्भ से ही रहा है। जहॉ प्रो0 अम्बेदकर ने भारतीय परम्पराओं को महत्व देने की बात कही है वही प्रसिद्ध चित्रकार के0के0 हैब्बर ने पश्चिमी देशों की कला की श्रेष्ठ उपलब्धियों को भी ग्रहण करने की बात कही है।

स्वतन्त्र भारत के आरम्भिक दशकों में ही अकादमिक कला–शिक्षा की अपेक्षा व्यावसायिक कला–शिक्षा को श्रेष्ठ मानने वाले कला–मनीषी अधिक थे। अतः बडौदा आदि में व्यवसायिक स्तरीय कला–शिक्षा को प्रमुखता दी गई साथ ही कला इतिहास की सैद्धान्तिक शिक्षा की भी व्यवस्था हुयी वहीं उत्तर भारतीय विश्वविद्यालयों में सिद्धान्त तथा व्यवहारिक पक्षों को समान महत्व प्रदान किया गया जिससे इसका स्वरूप अकादमिक हो गया फिर भी इसको अपेक्षित स्तर तक नही उठाया जा सका।

परन्तु केवल सैद्धान्तिक पक्ष के ज्ञान से कुछ भी लाभ नही होने वाला। श्री रणवीर सक्सैना ने कहा था कि केवल पुस्तकीय ज्ञान रखने वाला तथा चित्रकारी से पूर्णतः अनभिज्ञ व्यक्ति कभी भी अच्छा कला–आलोचक नहीं हो सकता। इस दृष्टि से एम0ए0 चित्रकला की परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले छात्रों का संसार में कोई स्थान नहीं है। इसमें केवल समय, शक्ति तथा धन का अपव्यय ही किया जा रहा है।

आगरा विश्वविद्यालय आगरा ने इस स्थिति पर काफी पहले ही गम्भीरतापूर्वक विचार करना आरम्भ कर दिया था तथा आगरा कॉलेज आगरा के तत्कालीन विभागाध्यक्ष श्री बी0पी0 कामबोज ने चित्रकला पाठ्यक्रम परामर्शदात्री समिति की कई बैठकों में इस समस्या पर निरन्तर विचार–विमर्श कराकर ललित कला संकाय के पृथक गठन हेतु राज्यपाल(कुलाधिपति) महोदय को एक प्रस्ताव भी भेजा था। इसकें फलस्वरूप उत्तर प्रदेश शासन के सरकारी गजट(असाधारण) विद्यार्थी परिशिष्ट, भाग–4 खण्ड(क), लखनऊ दिनांक 14 दिसम्बर 1982 में ललित कला संकाय के गठन की राज्यपाल महोदय द्वारा स्वीकृति की सूचना प्रकाशित हुई। इसके प्रभाव से ललित कला संकाय के अर्न्तगत ड्राईग एण्ड पेण्टिंग तथा संगीत की पृथक समितियों को साम्मिलित कर लिया गया। आगरा विश्वविद्यालय ने इसकी सूचना दिनांक 25 फरवरी 1983 को प्रसारित की और उसी तिथि से ललित कला संकाय के प्रथम डीन के रूप में श्री बी0पी0 काम्बोज ने कार्यभार सॅम्भाला।

भारतवर्ष में कला–शिक्षा के दो रूप चल रहे हैं–एक सामान्य और दूसरा विशेष। कुछ विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों में इसकी सैद्धान्तिक शिक्षा प्रदान की जाती है। कुछ अन्य विश्वविद्यालयों में इसकी विशेष शिक्षा व्यावसायिक रूप से सक्षम बनाने के लिये दी जाती है। कुछ ऐसे भी विश्वविद्यालय तथा उनसे सम्बन्धित महाविद्यालय है जिनमें एक मिला–जुला रूप विकसित हो रहा है। इनमें प्रयोगात्म पक्ष पर उतना बल नही दिया जाता है। जीविकोपार्जन, रोजगार के अवसरों तथा सरकारी सेवाओं में इनमें परस्पर प्रतियोगिता है जिसमें विशेष शिक्षा प्राप्त छात्र ही अधिकांश में सफल होते है। सामान्य शिक्षा प्राप्त छात्र अपने प्रयोगात्मक कार्य में कितना सुधार लाते हैं यह उनके भविष्य के प्रयत्नों पर निर्भर रहता है। ये छात्र प्रायः वाणिज्यपरक कला, विज्ञापन, दैनिक उपयोग की वस्तुओं तथा उपकरणों के डिज़ाइन, रेखाचित्र, मानचित्र, नक्शें, अलंकरण, आन्तरिक सज्जा आदि का कार्य कर सकते हैं या फिर कला–शिक्षक बन सकते हैं।

निष्कर्ष

अतः निःसंकोच कहा जा सकता है कि लगातार कला को ऊँचाईयों पर ले जाने का प्रयास तो

कला–शिक्षक एवं कलाकार द्वारा किया जा रहा है। परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि हमारे यहां विश्वविद्यालयों में कला की जो शिक्षा प्रदान की जा रही है। उसमें अभी और सुधार की आवश्यकता है। इसकी उपयोगिता यही है कि इसके माध्यम से हाईस्कूल तथा माध्यमिक विद्यालयों में कला की शिक्षा हेतु शिक्षक तैयार किये जा रहे है। कुछ विशेष योग्यता वाले विद्यार्थी स्नातक एवं परास्नातक कक्षाओं के शिक्षक भी नियुक्त हुए है। कुछ ने कलाकार के रूप में अनेक स्थानों पर प्रदर्शिनियां करके ख्याति प्राप्त की है। एक विशेष पक्ष यह भी है कि इस शिक्षा के द्वारा समाज में कला की चेतना का व्यापक रूप में प्रसार हुआ है। आज की परिस्थितियों में व्यावसायिक पाठ्यक्रम के लिए आर्थिक कारणों से स्वीकृति मिलना बहुत कठिन है। केन्द्रिय संस्था अपनी समितियों पर निर्भर है। अतः वहा भी पूर्व व्यावसायिक पाठ्यक्रम लागू नहीं है। अतः कला के लिए व्यावसायिक वातावरण तो है परन्तु हर छोटे शहर में यह सम्भव नहीं हो पाया है। बड़े शहरों मे कलाकारों को ज्यादा अवसर मिल रहे हैं अपेक्षाकृत छोटे शहरों के। इसे पूर्णतः व्यावसायिक स्तर प्रदान करने में समय लगेगा। वर्तमान स्वरूप में इस कला शिक्षा का यही महत्व है कि कला की सामान्य धारा को प्रवाहित कर जन–जन की कला चेतना को यथाशक्ति अधिक से अधिक प्रबुद्ध किया जाए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *प्रो0 विश्वनाथ प्रसादः कला एवं साहित्य प्रवृत्ति और परम्परा– बिहारी हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना–3 नवम्बर 73*
2. *डॉ0 एस0 एन0 सक्सैना : भारतीय चित्रकला, चित्रकला के आधुनिक परिवेष में विश्वविधालयों की भूमिका।*
3. *डॉ0 गिर्राज किषोर अग्रवाल : आधुनिक भारतीय चित्र कला संजय पब्लिकेशन्स आगरा–3 1991*
4. *डॉ0 हरद्वारी लाल शर्मा : सौन्दर्य शास्त्र– मधु प्रकाशन, इलाहाबाद 1979*
5. *वाचस्पति गैरोला– भारतीय चित्र–कला : मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद 1963*
6. *रामचन्द्रशुल्क : कला और आधुनिक प्रवृत्तियां हिन्दी समिति सूचना विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ 1963*
7. *Dr. N.K. Chaturwedi : art and Cultural Heritage of India – Aaditya Publishing House, Jaipur, Edition-2014*
8. *Institutes and Associations, Encyclopedia of world Art, Vol VIII.*
9. *Ratan Parimoo: Studies in Modern Indian Art.*

Seminar & Journals

10. *Dr. Anis Farooqui: Problems of Art Education-31 March 1981.*
11. *B.P. Kamboj: Art Education in University; Some Problems and Suggestions.*
12. *B.P. Kamoj: Art Education of the University some thoughts on its objectives: 31.03.1981.*
13. *B.C.Sanyal: Goals and objectives of Professional Art Education and relationship with Contemporary Art, Seminar on Art Education : Banglore, 1983.*
14. *Bireshwara Bhattacharjee - Role of Art Education and their function as Art Teachers, Seminar on Art Education in India Bangalore 1983.*
15. *Dr.C.L. Jha: Presidential Address, First Meerut University, Drg & Ptg. Seminar 1972.*
16. *K.K. Hebbar: Objectives of Professional Education in Art, Seminar on Art Education 1956.*
17. *Mulk Raj Anand: The Place of the art in University Education Seminar on Art Education 1956, L.K.A., New Delhi.*
18. *R.B. Bhaskaran: Art Education, Seminar on Art Education in India L.K.A. Banglore 1983.*
19. *R.M.Rawal: Purpose of Art in Education, Seminar of Art Education 1956, L.K.A., New Delhi.*

Journal

20. *The Promotion of the Arts in Britain, British Information Service Dec, 1963.*

Report

21. *First Seminar on Art Education, Meerut Univ.1972*

ys[k

22. *पी0एन0चोयल : कला की शिक्षा के मूल उद्देश्य :*
23. *Seminar on Art Education, Department of fine Art, Agra college, Agra, 31-03-1981.*